अध्याय उन्नीसवाँ

॥श्री गणेशाय नम:॥ श्री सरस्वत्यै नम:॥ श्री सिद्धारूढ़ाय नम:॥

"हे दयालु सिद्धारूढ़जी, आप मेरा हृदय अच्छी तरह से समझते हैं। मैं हृदयांतर से आप को प्रणाम करता हूँ, मुझे आप का प्रेम दीजिए। वरदान देने वाले आप के चरणों पर मेरी श्रद्धा नहीं है और मेरे मन में विरक्ति का भाव भी नहीं है। ऐसे मेरे मन में आप के चरणों के प्रति भक्तिभाव निर्माण कीजिए।"

हे अंतर्यामी सतगुरुनाथजी आप को मैं प्रणाम करता हूँ। भगवानजी के अनेक रूपों में आप हमेशा अपनी लीलाएँ दिखाते हैं। आप की अल्प कृपा भी अगर प्राप्त हो जाए, तब भी भवसागर में भ्रमित हुए भक्तगणों का भ्रम नष्ट होकर सत्य ज्ञान का प्रकाश उनके हृदय में फैलकर उनका उद्धार होता हैं। इस मृत्युलोक में रहने वाले अज्ञानी लोगों के हृदय में गलत ज्ञान होता है और आप की कृपा से जल्द ही उसका निराकरण होता है। अनंत जन्मों में प्राप्त की हुई कोटी कोटी पुण्य की गठरियाँ अगर अपने पास हो, तभी आप से भेंटवार्ता होती है और शरणागत को आप तत्काल पार भी लगाते हैं। शास्त्रों में इस भवसागर को पार करने के अनेक उपाय बयान किये हैं। परंतु आप के बिना किसी को भी उनका अर्थ समझ में नहीं आता, हर एक का मूल स्वभाव आप अच्छी तरह से जानते हैं। कर्म करना यह सभी प्राणियों का पैदाइशी गुण (स्वभाव) होने के कारण, आप उन्हें निवृत्ति का मार्ग दिखाते हैं, जिसमें सांसारिक जंजाल में फँसे मन को निकालकर ईश्वर के चरणों में लगाया जाता है और जो मार्ग मनुष्य को विषयोपभोगों से दूर ले जाता है। आप की सेवा के रूप में अगर निष्काम कर्म किया जाए, तो अहंकार तथा ममता इन दोनों का विनाश होकर हृदय में भक्ति प्रेम की लहरें उमड़ पड़ती हैं और सतगुरुजी का रूप और नाम वह स्थिर होते हैं। वैराग्य की ज्वाला अपने आप भड़क उठती है, जिससे सभी विषयोपभोगों की मनोकामनाएँ जलकर खाक हो जाती हैं। विवेक से विषयवासनाओं का मैल धो डालने से स्वरूप का ज्ञान होता है। स्वरूपसाक्षात्कार (आत्मज्ञान) प्राप्त होने के लिए सतगुरुजी की कृपा से मिलने वाला बोधन ही है, क्योंकि सतगुरुजी की कृपा प्राप्त हुए बगैर अन्य सभी उपासनाओं का

आचरण व्यर्थ हो जाता है। सतगुरुजी की शरण में जाने से वे दयालु होकर हमें अपनाते हैं और उनकी शक्ति से मृत्यु पर भी जय प्राप्त करके लोग पार हो जाते हैं।

श्रोतागण, अब सतगुरुजी की पुण्यदायी कथा सुनिए। एक बार सतगुरुजी मठ में थे, उस समय बेनकप्पा नाम का एक भक्त उसके मित्र के साथ बातचीत करते हुए दीवारों पर चित्र बना रहा था; दोनों मिलकर सेवा कर रहे थे। उस समय बेनकप्पा ने कहा, "अगली बार महाशिवरात्री के समारोह के लिए मैं एक अनुपम चित्र बनाकर लाने वाला हूँ, उस चित्र को देखकर लोग सराहना करते नहीं थकेंगे।" बेनकप्पा को ज्ञात ही नहीं था की सिद्धनाथजी उसके पीछे ही खड़े थे; सिद्धजी आगे बढ़कर बोले, "तुम कह रहे हो की तुम एक मनोहर चित्र बनाने वाले हो, लेकिन समझ लो, की अगले वर्ष भगवान जो चित्र बनाने वाले हैं वह अति भयानक होगा। सारा गाँव जंगल के समान हो जाएगा, सभी लोग गाँव छोड़कर जंगल में रहने जाएँगे। जंगली जानवर गाँव में प्रवेश करके घूमते रहेंगे। गाँव के सभी मार्गों पर मृत शरीर बिखरे होने के कारण, सभी मार्ग भीषण दिखाई पड़ेंगे और मृत शरीरों पर बैठकर गिद्ध बड़े आनंद से मांस खा रहे होंगे।" इतना कहकर सिद्धनाथजी मौन हो गये। उनकी बातें सुनकर दोनों अत्यंत भयभीत हुए लेकिन बहुत सोचने के बावजूद भी उनको सिद्धनाथजी के बातों का अर्थ समझ में नहीं आया।

ठीक छह महिनों के बाद मुंबई शहर में प्लेग की बीमारी फैल गयी| कुछ ही दिनों बाद वह रोग हुबली तक पहुँच गया। एक के बाद एक लोग प्लेग की बीमारी से मरने लगे। मृत्यु के भय से लोगों के कलेजे काँपने लगे, इसलिए सभी गाँव वाले अपने अपने घर छोड़कर जंगल में जाकर रहने लगे। गाँव वीरान हो गये। अगर किसी के घर में कोई प्लेग से बीमार हुआ है इस की जानकारी मिलते ही, उसके परिवार के सभी सदस्यों को सब से पहले बाहर भेज दिया जाता था। उसके पश्चात वे घर वाले जंगल में कुटीर तैयार करके वही रहते थे। परिणाम रूप से रोगियों की सेवा करने के लिए कोई भी न होने के कारण वे रास्तों पर जाकर मरते थे। उस समय, उनके मृत शरीरों पर अंतक्रिया करने के लिए भी कोई उपस्थित न होने के कारण उन पर गिद्ध टूट पड़ते थे। आखिर

इस प्रकार सिद्धारूढ़जी भविष्यवाणी शतप्रतिशत सही साबित हुई। अब सतगुरुजी की महिमा सुनिए। बेनकप्पा प्लेग की बीमारी के जाल में फँसा। सरकारी नौकर ने घर आकर व्याधिग्रस्त बेनकप्पा को देखा और यह वार्ता उच्च अधिकारी तक पहुँचाने हेतु वह चला गया। कई बार उच्च अधिकारी रोगियों को ही जंगल में भेज देते थे, जहाँ वे भय से ही मर जाते थे। बेनकप्पा की पत्नी भयभीत हुई और सिद्धनाथजी को शरणागत होकर बोली, "हे दयाघन, हम दीन लोग आप की शरण में आए है, हमारी रक्षा कीजिए।" सारी वार्ता सुनने के पश्चात सिद्धजी ने कहा, "आप सभी लोग नामस्मरण (भगवान या सतगुरुजी के नाम के निरंतर जाप करना) कीजिए। भयभीत होने की कोई बात नहीं, आप लोगों को गाँव के बाहर नहीं भेजा जाएगा।" कुछ दिनों के पश्चात बेनकप्पा पूर्ण रूप से रोगमुक्त हो गया तथा उसे गाँव से बाहर भेजने हेतु कोई भी घर नहीं आया। परंतु उसके बाद उसकी पत्नी प्लेग से बीमार हो गयी। खबर पहुँचते ही फिर एक बार सरकारी नौकर घर आया, लेकिन उसके सामने ही सोई होने के बावजूए भी वह उसे दिखाई न पड़ी। उस घर में कोई भी बीमार नहीं है, यह दर्ज करके वह पलभर में चला गया। जो अपने भक्तों की रक्षा करने हेतु हमेशा तत्पर रहते हैं, ऐसे सतगुरुजी की ही यह लीला थी। उसके पश्चात सतगुरुजी का प्रसाद रूपी भस्म उसके माथे पर लगाते ही वह रोगमुक्त हो गयी। इस प्रकार सिद्धारूढ़ स्वामीजी भक्तों का पालन करते हैं।

अस्तु। पुरानी हुबली में (हुबली शहर का पुराना हिस्सा) जीवप्पा नाम का एक जुलाहा अपनी पत्नी तथा बच्चों के साथ गरीबी की हालत में दिन बिता रहा था। वह प्रतिदिन अपनी पत्नी तथा बच्चों के साथ सिद्धारूढ़जी के दर्शन करके, वहाँ बड़े प्रेम से भजन में हिस्सा लेकर, सिद्धजी की आरती उतारने के पश्चात घर लौटता था। उसी समय गाँव में प्लेग की बीमारी चल रही थी। जीवप्पा रोगग्रस्त हो गया। उसने तुरंत अपनी पत्नी तथा बच्चों को सिद्धाश्रम भेज दिया। उसकी पत्नी सिद्धनाथजी को प्रणाम करके बोली, "हे प्रभो, मैं आप के शरण में आयी हूँ! घर में मेरे पति बीमारी से छटपटा रहे हैं। अब हमारी रक्षा कौन करेगा? मैं निश्चित रूप से जानती हूँ की आप के सिवाय हमारी रक्षा करनेवाला दूसरा कोई भी नहीं है। कृपा करके मेरे पति को रोग से मुक्त

कीजिए।" उसकी दयनीय स्थिति देखकर सिद्धनाथजी ने उसे भस्म दिया और सभी को नामस्मरण करने के लिए कहा। सतगुरु सिद्धारूढ़जी की कृपा से जीवप्पा रोगमुक्त हो गया, परंतु रोग के कारण उसकी दोनों आँखे नाकाम होने के कारण वह अंधा हो गया। उसके कारण पतिपत्नी दोनों तड़प उठे तथा जीवननिर्वाह बंद हो गया। इसलिए वे सतगुरुजी के पास आए और उन्होंने अत्यंत दीनता से प्रार्थना की और बोले, "महाराज, सागर में डूबकर मरते समय बाहर निकलकर कुँवे में जाकर गिरकर मरने वालों के समान, हम प्लेग की बीमारी से बच तो गये, लेकिन जीवननिर्वाह ही न होने के कारण, भूख से कंगाल होकर मर रहे हैं। ऐसे संकट से आप के बिना हमें कौन बचायेगा? हम गरीबों को आप के सिवाय दूसरा कोई सहारा न होने के कारण हम आप की शरण में आए हैं।" दीनों पर दया करने वाले सतगुरुजी, भक्तों की रक्षा करने वाले करुणाकर, शरणागतों को छत्रछाया देनेवाला वहा महावृक्ष, सिद्धारूढ़ स्वामीजी ने जीवप्पा को समीप बुलाया। उसकी दोनों आँखों को अपने हाथों से स्पर्श किया तथा आँखों पर एक पट्टी बाँधी और उसकी पत्नी से घर जाने के पश्चात पट्टी खोलने के लिए कहा। उसके बाद सतगुरुजी को प्रणाम करके बच्चों के साथ घर लौटे, पत्नी ने पति के आँखों पर बँधी पट्टी खोली। उसने देखा की रोग होने से पूर्व जैसे उसकी आँखे थी अब वैसे ही दिखाई दे रही थी और उसकी नजर वापस लौटी थी। दोनों ने मिलकर सतगुरुजी का भजन किया। उन्होंने कहा की अब हमारी यह घरगृहस्थी हम ने सतगुरुजी के चरणों पर न्यौछावर कर दी हैं, अब हम उनके दास बन जाएंगे तथा घरगृहस्थी का भार उन्हें सौंपकर उसे चलायेंगे। दयालु सतगुरुनाथजी सचमुच भक्तों की रक्षा करते हैं, उनके संकटों का निवारण करते हैं, इसीलिए भक्तिभाव बढ़ता जाता है।

अब इस कहानी का लक्ष्यार्थ सुनिए, जिससे मन में तृप्ति भी भावना जागृत होकर उपासक के मन की विषयोपभोगों की कामनाएँ पूर्ण रूप से नष्ट हो जाती हैं। बेनकप्पा यानी अज्ञानी जीवात्मा समझिए और उसे हृदयग्रंथिरोग (अंत:करण में स्थिर हुई अज्ञान की गाँठे, जिनके कारण असत्य भी सत्य लगता है) की बाधा होने के कारण उसकी पत्नी सतगुरुजी की शरण में गयी और बोली, "हे सतगुरुमहाराज, जिसे हृदयग्रंथिरोग हुआ है उसे सत्संग से दूर करते

है; परंतु सत्संग का त्याग करने से हम निश्चित ही मर जाएंगे।" उसपर सतगुरुजी ने उन्हें अभय दिया और नामस्मरण करने के लिए कहा, जिससे हृदयग्रंथिरोग का निवारण हुआ और स्वामीजी ने उन्हें सत्संग से दूर भी होने न दिया। जीवात्मा जब सुख में होता है, तब वह बुद्धि की मलीनता की ओर ध्यान नहीं देता, परंतु सत्संग से ही बुद्धि शीघ्र निर्मल हो जाती है। जीवप्पा को एक जीवात्मा समझिए। वह भवरोग से अंधा हो गया, परंतु सतगुरुजी शरण में जाकर उसके ज्ञानचक्षु खुलकर उसे ज्ञानदृष्टि प्राप्त हुयी। ऐसी अजेय तथा शांत होनेवाली आत्मा, जो शब्दों से परे हैं तथा कर्म और त्रिगुणों के परे होते हुए नाम और रूप धारण करके क्रीडा करती है। व्दैतरहित होने के बावजूद भी सगुण रूप में (एक से अनेक) दिखाई पड़ती है और उसकी नजर में जो भी आए, उसे पावन करते हुए अपने आप से खेलती है। जो स्वयं भगवान तथा स्वयं ही भक्त होती है, स्वयं पर संकट आने पर स्वयं ही रक्षा करती है, स्वयं ही स्वयं पर दया करती है और स्वयं ही स्वयं को पार लगाती है (जीवात्मा तथा परमात्मा के बीच में स्थित व्दैतभाव जब पूर्ण रूप से नष्ट हो जाता है, तब इस प्रकार का भाषाप्रयोग किया जाता है)। ऐसे कल्पना से परे होने वाले सतगुरुजी ने मुझे इस ग्रंथरचना करने की आज्ञा दी तथा ग्रंथ लिखने का ज्ञान दिया, इसीलिए इस ग्रंथ की प्रगति हो रही है। सतगुरुनाथ स्वयं ही ग्रंथरचना कर रहे हैं और मैं केवल निमित्तकारण हूँ। ऐसे सर्वज्ञ तथा सर्वशक्तिमान सतगुरुनाथ के बगैर कौन यह कार्य पूर्ण कर सकता है? श्रोतागण, अब अगले अध्याय में बयान की हुई सुरस कथा सुनिए, जिससे त्रितापों का (त्रिविध ताप) विनाश होकर तृप्ति प्राप्त होगी। अस्तु। जिसका श्रवण करने से सभी पाप भस्म हो जाते हैं, ऐसे इस श्री सिद्धारूढ़ कथामृत का मधुर सा यह उन्नीसवाँ अध्याय श्री शिवदास श्री सिद्धारूढ़ स्वामीजी के चरणों में अर्पण करते हैं। सबका कल्याण हो।

॥ श्री गुरुसिद्धारूढ़चरणारविंदार्पणमस्तु ॥